ISSN 2348-3857

भारतीय राष्ट्रवाद के विविध आयाम

प्रमोद कुमार शर्मा

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र ''भारतीय राष्ट्रवाद के विविध आयाम'' में भारत के प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक विचारकों के चिंतन में राष्ट्रवाद की झलक परिलक्षित हुई है। यहाँ वैदिक काल, महाकालों के काल, मौर्य काल, गुप्तकाल, राजपूत काल आदि में भारतीय राष्ट्रवाद की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। अंग्रेजों की साम्राज्यवादी, आर्थिक शोषण की नीति, भारतीय जुलाहों एवं किसानों को गरीब करने की नीति तथा लार्ड डलहौजी को अनुचित नीतियों ने भारत में 1857 की क्रांति को अनिवार्य कर दिया। 1857 की क्रांति के बाद भारतीय पुनर्जागरण के उद्धारकों क्रमश: राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, श्रीमती ऐनीबीसेंट आदि के प्रयासों से भारतीय जनता ने जागरुक होकर अंग्रेजों के विरुद्ध कार्यवाही करने का मानस बनाया। अंग्रेजी शिक्षा, रेल-डाक-तार सुधार, मार्गो की सुव्यवस्था ने यातायात एवं संचार के साधन सुलभ कर दिये। अंग्रेजी शिक्षा ने पाश्चात्य दर्शन एवं अंग्रेजी संस्थाओं से परिचित करवाया। फलत: 1885 में भारत में क्रांति का सूत्रपात हुआ जिसे अंग्रेजों ने शक्ति के बल पर कुचल दिया। क्रांति के बाद लार्ड लिटन की नीतियों (दुभिक्ष की असफलता, शस्त्र विधेयक, सिविल सर्विस (आयु 21 से 19 करना), प्रेस अधिनियम) ने भारतीयों के क्रोध को सातवें आसमान पर पहुँचा दिया। एक अंग्रेज अधिकारी ए.ओ. ह्यूम ने इसे शांत करने हेतु 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की। कांग्रेस के तीन युग उदारवादी (1885-1905), उग्रवादी (1906-1918), गाँधीवादी (1919-1945) के प्रयासों एवं क्रांतिकारियों (भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव आदि) की विस्फोटक नीति, सुभाष चन्द्र बोस द्वारा स्थापित 1938 में फावर्ड ब्लाक आदि कार्यो ने भारतीय विभाजन को आवश्यक कर दिया। अन्तत: 1947 में भारत की स्वतंत्रता को भारत के विभाजन द्वारा स्वीकार किया गया। इस प्रकार इस शोध-पत्र में यह बताया गया है कि राष्ट्रवाद के विभिन्न आयामों ने स्वतंत्रता की दहलीज तक पहुँचने में सफलता प्राप्त की।

''राष्ट्रवाद एक ऐसी सशक्त विचारधारा है जो प्रत्येक राष्ट्र को जिन्दा रखती है। सामान्य अर्थ में यह एक मानसिक मनोवृत्ति है जो मानव में स्वदेश के लिए मर-मिटने की भावना का सृजन करती है। प्रत्येक राष्ट्र के सृजनात्मक विकास हेतु राष्ट्रवाद का होना आवश्यक है। राष्ट्रवाद का अर्थ है विशाल समष्टि के साथ सर्जनात्मक तादाम्य। इस प्रकार का तादाम्य तभी सम्भव है, जब हम क्षुद्रता का अतिक्रमण करें। मनुष्य के आत्मिक प्रसारण में राष्ट्रवाद का महत्वपूर्ण स्थान है।'' राष्ट्र शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के नातियों (Nation) से हुई है, जिसका अर्थ है 'जन्म'। 1939 में रॉयल इन्सीट्यूट ने अपनी रिपोर्ट में राष्ट्र की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया-[1]

1. राष्ट्र के कुछ सामान्य हित होते हैं। यह राज्य के साधनों द्वारा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

2. राष्ट्र में विद्यमान नागरिकों में राष्ट्रीय भावना की धारणा का होना अनिवार्य है।

3. राष्ट्र ऐसे समूह का परिभाषित प्रदेश होता है जिसमें उसे स्थापना का अधिकार होता है।

प्रो. रेम्जे म्योर ने राष्ट्र की परिभाषा करते हुए लिखा है, ''राष्ट्र वह जनसमुदाय है जिसके सदस्य अपने को स्वाभाविक रूप से एकता के कुछ ऐसे सूत्रों से बंधा हुआ अनुभव करते हैं जो इतने सुदृढ़ तथा वास्तविक होते हैं कि उनके कारण वे प्रसन्नता पूर्वक साथ-साथ रह सकते हैं, उनके पृथक हो जाने पर वे दु:खी होते हैं और ऐसे लोगों को अधीनता स्वीकार नहीं कर सकते जो इन बन्धनों के अन्तर्गत नहीं हैं।[2]

रेम्जेम्योर की इस परिभाषा से यह परिभाषित होता है कि राष्ट्र ऐसे लोगों की बिरादरी का एक समूह होता है जिसमें

रहने वाले लोग इस बात का अनुभव करते हैं कि वे सब एक हैं। इसमें स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व आदि जैसे तत्व होते हैं, जो सामुदायिक जीवन की भावना को संगठित करते हैं।

राष्ट्रीयता

राष्ट्र शब्द का अर्थ जानने के बाद हमें राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय भावना को जानना आवश्यक है। वस्तुत: राष्ट्रीयता राष्ट्र से बनी भाववाचक संज्ञा है, जो एक विशिष्ट जन-समूह की ओर इंगित करती है। अत: राष्ट्रीयता उस जन-समूह में पाई जाने वाली भावना की द्योतक है। यह भावना देश-प्रेम, राज भक्ति, आत्मीयता की भावना को अभिव्यंजित करती है। प्राचीन यूनान की सभ्यता, रोम की सभ्यता में राष्ट्रीयता की भावना के व्यापक होने से ही इन सभ्यताओं ने अतीत में गौरवशाली इतिहास की नींव रखी।[3]

16वीं से 18वीं शताब्दी तक यूरोप में राष्ट्रवादी गतिविधियों का बोलबाला रहा। किन्तु 19वीं शताब्दी में एशिया में राष्ट्रवाद का प्रादुर्भाव हुआ। जैसा कि डॉ. वी.पी. वर्मा का कहना है, ''19वीं शताब्दी के मध्य से एशिया का मन तथा आत्मा एक बार पुन:निश्चित रूप से जाग गये। जिन प्रमुख नेताओं ने इस एशियाई कुम्भकरण के इस जागरण का श्रेय प्राप्त किया उनमें चीन के सनयात सेन, भारत के तिलक एवं गाँधी तथा टर्की के कमाल पाशा हैं जिन्हें विशेषत: उच्च एवं अद्‌भुत स्थान प्राप्त है।''[4]

राष्ट्रवाद की परिभाषाएँ

इतिहासकार बक्शी के अनुसार, ''भारत का 19वीं शताब्दी का राष्ट्रवाद यह प्रदर्शित करता है कि समस्त विश्व कई अलग-अलग राष्ट्रों में विभक्त था किंतु उनमें एकरूपता थी।''[5]

राधामोहन उपाध्याय के अनुसार, ''राष्ट्रीयता एक मानसिक प्रवृत्ति है जो मनुष्य में अपने देश के लिए मर-मिटने की भावना का सृजन करती है। भारतीय परम्परा में राष्ट्रीयता का सृजन होना आवश्यक था।''[6] डॉ. वी.पी. वर्मा के अनुसार, ''भारतीय राष्ट्रवाद का तात्पर्य है- समूचा भारत देश एक है, इस प्रकार की सब की भावना का होना। भाषा, वर्ग तथा अन्य प्रकार की विभिन्नताओं के बावजूद जब हम यह कहते हैं कि सारा भारत एक है और इसके निवासियों को अपना भाग्य-निर्माण स्वयं करना चाहिए, तब यही भावना राष्ट्रवाद की भावना कही जा सकती है।[7]

राष्ट्रवाद की उपरोक्त परिभाषाओं के अतिरिक्त भारतीय पुनर्जागरण के विचारकों ने भी अपने विचार निम्नलिखित रूप से रखे हैं-

विवेकानन्द का राष्ट्रवाद

विवेकानन्द ने भारत की कोटि-कोटि जनता को सम्बोधित करते हुए कहा कि ''हे वीर! निर्भीक बनो, साहस करो, मैं भारतीय हूँ और प्रत्येक भारतीय मेरा भाई है। बोलो, ज्ञानहीन भारतीय, दरिद्र तथा अकिंचन भारतीय, ब्राह्मण भारतीय, अछूत भारतीय मेरा भाई है। भारतीय मेरा जीवन है, भारत की भूमि पर मेरा परम स्वर्ग है, भारत का कल्याण मेरा कल्याण है।''[8] विवेकानन्द द्वारा राष्ट्र की उन्नति एवं जागरण के लिए दिया गया यह वक्तव्य राष्ट्रवाद का ही परिचायक है।

गोखले का राष्ट्रवाद

गोखले ने राष्ट्रवाद में अपनी पूर्ण निष्ठा व्यक्त की। उनके अनुसार, ''अपनी मातृभूमि के लिए मेरी आकांक्षाएँ अनन्त और असीमित हैं। मैं अपने देश, अपने देशवासियों के लिए उसी स्तर और सम्मान की रक्षा करूँगा जो किसी भी दूसरे देश में वहाँ के देशवासियों को प्राप्त हो। मेरी यह आकांक्षा है कि मेरे देश के स्त्री और पुरुष को, उच्चतम स्तर तक विकास के अवसर प्राप्त हों।''[9]

रानाडे का राष्ट्रवाद

भारतीय राजनीतिक विचारक, महादेव गोविन्द रानाडे ने 'मराठों के इतिहास' को भारतीय राष्ट्रीयता का स्त्रोत मानते हुए महाराष्ट्र के धर्म, भाषा, नस्ल तथा साहित्य संबंधी एकता का सारे भारत के राष्ट्रानुभव का आधार बताया।[10]

तिलक का राष्ट्रवाद

तिलक की मान्यता थी कि राष्ट्रीयता के विकास के लिए राष्ट्रीय एकता का होना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि ''भारतीय अपने धार्मिक विश्वास, भाषा, जाति, प्रान्त आदि का ध्यान न रखते हुए अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम रखें तथा देशप्रेम की भावना से लोग एकता के सूत्र में बंधे रहें।'' एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा कि ''स्वतंत्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और इसे मैं लेकर ही रहूँगा।''[11] तिलक शिवाजी की भाँति ही एक पक्के हिन्दू और स्वतंत्रता प्रेमी थे। 1879 ई. में उन्होंने कानून की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद पूना न्यू इंग्लिश स्कूल में उन्होंने वेतन पर प्राध्यापक का कार्य किया। कुछ समय बाद उन्होंने 'केसरी' (मराठी भाषा में) और 'मराठा' (अंग्रेजी में) पत्रों को निकाला। उनके ये दोनों पत्र ब्रिटिश शासन की बुराईयों को उजागर करने के लिए महत्वपूर्ण अस्त्र थे।[12]

तिलक ने महाराष्ट्र के निवासियों में देशभक्ति की भावना भरने के लिए गणपति त्यौहार का अवलम्बन लिया। जिसका

उद्देश्य न केवल धार्मिक था अपितु राजनीतिक भी था। इससे महाराष्ट्र के लोगों को अनुशासन की प्रेरणा मिली। 1895 में उन्होंने शिवाजी महोत्सव की स्थापना की, ताकि भारत के युवक मातृभूमि को विदेशी बंधन से मुक्त करने में शिवाजी के उदाहरण से प्रेरित हो सकें। शिवाजी द्वारा अफजलखां के वध के बारे में तिलक ने कहा था, ''यदि चोर हमारे घर में घुस आये और उन्हें भगाने के लिए हममें पर्याप्त शक्ति न हो तो हमें उनको घर में बंद करके जीवित जला देना चाहिए।''[13]

लाला लाजपत राय का राष्ट्रवाद

लाला लाजपत राय की राष्ट्र की अवधारणा 19वीं शताब्दी के इटली के राष्ट्रवादियों से मिलती-जुलती है। उन्होंने 'अनहैप्पी इंडिया' में स्पष्ट रूप से लिखा है कि ''भारत को शक्तिशाली स्वतंत्र जीवन का निर्माण करके अपने आप को सबल बनाना चाहिए, और यह उसका अधिकार है। शासितों की सम्मति किस प्रकार का एकमात्र तर्कसंगत तथा वैद्य आधार है।'' अपनी एक अन्य पुस्तक 'द आर्य समाज' में उन्होंने स्पष्ट किया कि ''हिन्दू धर्म का भारतीय राष्ट्रवाद के महत्तर धर्म के साथ सामन्जस्य स्थापित किया जाय।'' उन्होंने यह भी कहा कि आधुनिक परिस्थितियों में 'भारतीयों को राष्ट्रीयता के लिए संघर्ष करना सीखना चाहिए और उन्हें उन हथियारों का प्रयोग करने का प्रयास करना चाहिए जिनका उनके विरुद्ध अंग्रेज प्रयोग करते हैं।'[14]

अरविंद का राष्ट्रवाद

अरविन्द के दर्शन में प्राचीन वेदान्त तथा पुराणों की झलक मिलती है। इसलिए उनका राष्ट्रवाद इनसे प्रभावित है। सचमुच में अरविन्द वे राष्ट्रवाद की एक महान् विभूति थे जिनमें देशभक्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी। वे कवि, तत्वशास्त्री, साहित्य दृष्टा, मनीषी, मानवता के प्रेमी और राजनीतिक दार्शनिक थे। वेलेंटाइन शिरोल ने उनके संबंध में लिखा है, ''अरविंद के सक्रिय आत्म त्याग के बारे में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती है। उनकी दृष्टि में ब्रिटिश शासन तथा पश्चिमी सभ्यता जिसका वह समर्थन करता है, दोनों हिन्दुत्व के जीवन के लिए खतरनाक हैं।'' अरविंद का राष्ट्रवाद आध्यात्मिक दृष्टि से प्रेरित था।[15]

गाँधीजी का राष्ट्रवाद

गाँधीजी एक आदर्शवादी विचारक थे इसलिए उनका राष्ट्रवाद अन्तर्राष्ट्रीय था। उनके अनुसार, ''राष्ट्रवाद राजनीतिक विकास की चरम अवस्था नहीं हो सकता। वह साध्य नहीं है, एक बीच की अवस्था है। उसका निर्माण अन्तरराष्ट्रवाद के मार्ग में आवश्यक कदम है।'' एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा कि ''श्रमिक को हर लाभदायक काम के लिए समुचित पारिश्रमिक मिलना चाहिए। सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह कम से कम इतना सबके लिए सुनिश्चित करे। जो सरकार इतना भी नहीं कर सकती वह सरकार नहीं है। वह अराजकता है। ऐसे राज्य का शान्तिपूर्वक विरोध करना चाहिए।''[16]

पं. जवाहर लाल नेहरू का राष्ट्रवाद

नेहरू एक महान् राष्ट्रवादी थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि राष्ट्रवाद तत्वत: अतीत की उपलब्धियों, परम्पराओं एवं अनुभवों की सामूहिक स्मृति है और राष्ट्रवाद जितना शक्तिशाली आज है उतना पहले कभी नहीं था। जब कभी संकट आया है तभी राष्ट्रवादी भावना का उत्थान हुआ है और लोगों ने अपनी परम्पराओं से शक्ति तथा सांत्वना प्राप्त करने का प्रयत्न किया है। अतीत और राष्ट्र का पुनरान्वेषण वर्तमान युग की एक आश्चर्यजनक प्रगति है।[17]

सुभाषचन्द्र बोस का राष्ट्रवाद

बोस यह मानते थे कि स्वाधीनता प्राप्ति के लिए महान नैतिक तैयारियों की आवश्यकता है। इस प्रकार यद्यपि विदेशी नौकरशाही के विरुद्ध संघर्ष के संबंध में उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी था, किन्तु वे इस तथ्य को भी स्वीकार करते थे कि भारतीय जनता को आत्म-त्याग तथा कष्ट-सहन किये बिना सफलता नहीं मिल सकती। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि ''इतिहास का न्याय अनिवार्यत: अपने मार्ग का अनुसरण करेगा, राजनीतिक संघर्ष तथा सामाजिक संघर्ष साथ-साथ चलेगा। जो दल भारत के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करेगा वही दल जनता को सामाजिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता भी दिलायेगा।[18]

भारत में राजनीतिक जागरण के कारण

इसी प्रकार राष्ट्रवाद को शक्तिशाली बनाने हेतु भारत की धार्मिक एकता ने एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। हिन्दुओं के प्राचीन ग्रंथ वेद, उपनिषद, गीता, रामायण, महाभारत इन सब में राष्ट्रवादी की भावना स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। इस भावना ने भी यहाँ के नागरिकों में एकता का सूत्रपात किया, जो राष्ट्रवाद की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। तीव्र परिवहन तथा संचार साधनों के विकास ने भी राष्ट्रवादी की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य के हितों की सुरक्षा हेतु भारत में पक्के मार्गों का जाल बिछा दिया, जिससे एक प्रांत दूसरे प्रांत से जुड़ गया इस दिशा में रेलवे ने एक महत्वपूर्ण कार्य किया। 1853 में भारत की पहली रेल लाईन बम्बई से ठाणे तक प्रारम्भ हुई,

इसके बाद 1880 तक लगभग 2500 मील लम्बी और 1900 तक 25000 मील लम्बी रेलवे लाईन बिछाई गई। इसके अतिरिक्त आधुनिक डाकघर एवं बिजली के तार ने देश को संगठित करने में सहायता प्रदान की, डाकखानों के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक पत्र भिजवाने सफल हो गए, जिससे भारत में राजनीतिक जागरण की भावना का विकास हुआ, जो राष्ट्रवाद की ही एक महत्वपूर्ण कड़ी है।[19]

उपरोक्त तथ्यों के अतिरिक्त ऋषि मुनियों एवं धर्म प्रचारकों ने भी भारतीय एकता एवं जागरण की दृष्टि से कार्य किया। शंकराचार्य ने कन्याकुमारी से लेकर हिमालय के शृंगों तक अपने सिद्धांतों का प्रचार किया एवं चैतन्य ने बंगाल से लेकर वृंदावन तक अपने भक्ति आंदोलन की धारा को प्रसारित किया। इसके अतिरिक्त रामानंद ने भक्ति आंदोलन में मील के पत्थर की भांति कार्य करते हुये दक्षिण से उत्तर भारत में भक्ति का प्रचार किया, इस दिशा में कबीर, गुरुनानक, वल्लभाचार्य आदि संतों की एक महती भूमिका रही। अत: इन सब संतों ने भारत में कुरीतियों को दूर कर जागरुकता का वातावरण बनाया। यही जागरुकता राष्ट्रीयता की दिशा में एक सार्थक कदम थी।[20]

राजनीतिक एकता की दृष्टि से अंग्रेजी शिक्षा ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सर्वप्रथम 1829 की लार्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति को लागू कर भारत में अंग्रेजी शिक्षा को प्रारंभ किया गया, इसका उद्देश्य था भारतवासियों को मुंशी बनाना। इसी क्रम में 1854 में लार्ड डलहौजी ने चार्ल्स वुड अधिनियम पारित कर लंदन विश्वविद्यालय की भांति बम्बई, मद्रास और कलकत्ता में विश्वविद्यालयों की स्थापना की योजना रखी, आगे चलकर लार्ड रिपन के काल में 1882 में एक शिक्षा आयोग की स्थापना की गई जिसके अध्यक्ष सर विलियम हंटर थे। उन्होंने निजी शिक्षण संस्थाओं को आर्थिक अनुदान देने की घोषणा की तथा माध्यमिक शिक्षा उच्च शिक्षा और स्त्री शिक्षा को बढ़ावा दिया। इसके पीछे अंग्रेजों का यह स्वार्थ था कि भारत में साम्राज्यवाद की नींव पक्की हो जाये, किन्तु अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीयों को विचारों के आदान-प्रदान का एक मंच प्रदान किया जिससे भारत में राजनीतिक जागरण की भावना विकसित हुई।[21]

लार्ड लिटन (1876-80) की अनुचित नीतियाँ

लार्ड लिटन ने अपने काल में कई अनुचित कार्य किये जैसे दिल्ली दरबार को बुला कर भारतीय धन का अपव्यय करना, सिविल सर्विस के लिये निर्धारित आयु 21 से घटा कर 19 वर्ष करना, वर्नाक्यूलर प्रेस अधिनियम पारित करना, शस्त्र विधेयक पारित करना, अनावश्यक रूप से द्वितीय अफगान युद्ध कर भारतीय सैनिकों को आहूत करना एवं धन का अपव्यय करना आदि घटनाओं ने समस्त भारत वर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध असंतोष का वातावरण तैयार कर दिया। इस असंतोष को दूर करने के लिये लार्ड रिपन (1880-1884) ने शस्त्र अधिनियम एवं वर्नाक्यूलर प्रेस अधिनियम को रद्द कर दिया किन्तु वह इल्बर्ट बिल विधेयक को ज्यों का त्यों पारित करवाने के कारण अंग्रेजी की करनी एवं कथनी के अंतर को स्पष्ट रूप से इंगित कर दिया।[22]

उपरोक्त घटनाओं से भारतीयों का असंतोष अपनी चरम सीमा तक पहुँच गया। इसलिये अंग्रेजी जहाज को बचाने के लिये एक सेवानिवृत्त अंग्रेजी अधिकारी मिस्टर ए.ओ. ह्यूम ने 1885 में लार्ड डफरिन (गवर्नर जनरल) की सहायता से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की। कांग्रेस के प्रारम्भिक नेता गोखले, सुरेन्द्र नाथ बेनर्जी, फिरोज शाह मेहता, दादाभाई नौरोजी, बद्दरुद्दीन तैयब जी, जो पूर्णरूप से भारतीय राष्ट्रवादी थे, किन्तु उनकी अंग्रेजों के प्रति राजभक्त होने, अंग्रेजों के कोरे आश्वासनों से संतुष्ट होने तथा अंग्रेजी संसद एवं संस्थाओं के प्रति स्वामिभक्ति की नीति होने के कारण भारतीय राजनीति में एक नई विचारधारा - उग्रवाद के रूप में पनपी, जिसके नेता थे लाल-बाल-पाल। 1907 की सूरत की फूट में उग्रवादी दल की स्थापना को अनिवार्य कर दिया।[23]

सारांशत: भारतीय राष्ट्रवाद विभिन्न चरणों से गुजरता हुआ अंग्रेजों की प्रतिक्रियावादी नीतियों एवं उनके काले कारनामों, भारतीय साहित्यकारों-विचारकों के संदेश, अंग्रेजी शिक्षा, भारत की राजनीतिक एकता एवं कतिपय गवर्नर जनरलों की अनुचित नीतियों ने 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना को अनिवार्य कर दिया। 1885 से 1947 तक कांग्रेस ने विभिन्न चरणों एवं संघर्षो-उदारवादी काल (1885-1905), उग्रवादी काल (1906-1918), गाँधीवादी काल (1919-1947) तथा क्रांतिकारियों के साहसिक कारनामों, स्वराजिस्ट पार्टी (देशबंधु चितरंजन दास एवं मोती लाल नेहरू) तथा सुभाष चन्द्र बोस के फारवर्ड ब्लॉक ने भारतीय राजनीति को अंतिम चरण तक पहुँचा दिया जिससे 1947 में भारत के विभाजन पर भारत की स्वतंत्रता स्वीकार की गई। इस वर्ष भारत दो हिस्सों (पाकिस्तान एवं हिन्दुस्तान) में बँट गया। अतः असंख्य भारतीयों की कुर्बानियों के बाद भारतीय राष्ट्रवाद अपनी चरम सीमा स्वतन्त्रता तक पहुँचने में सफल हो गया।

ISSN 2348-3857

संदर्भ सूची

1. शर्मा, एच.सी., राष्ट्रवाद और राष्ट्र निर्माण सिद्धान्त एवं प्रक्रिया द्वारा उद्धरत, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2007, पृ. 15
2. ऐनसाइक्लोपिडिआ, अमेरिकन वाल्युम 19, पृ. 185
3. हेज और मून, प्राचीन सभ्यताओं का इतिहास, पृ. 225
4. वर्मा, वी.पी., आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, आगरा, 1998, पृ. 1-2
5. बक्शी, एस.आर., रूट्स ऑफ नेशलिज्म इन इंडिया, दिल्ली, 2006, पृ. 11-12
6. उपाध्याय राधामोहन, राष्ट्रीय एकता की खोज, अनुराग प्रकाशन, हावड़ा, 1994, पृ. 88-90
7. वर्मा, वी.पी., आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, आगरा, 1998, पृ. 141-142
8. उपर्युक्त
9. गोखलेज लास्ट बिल एण्ड टेस्टामेंट, 'गोखले सेन्चुरी सेवानायर' से उद्धत, 1886, पृ. 50-53
10. बर्थवाल, सी.पी., नेशनल इंटीग्रेशन इन इंडिया सिन्स इन्डर्पेंडेंस, न्यू रॉयल बुक कं., लखनऊ, 2001, पृ. 105-110
11. एन.जी. जोग, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, प्रकाशन विभाग और संचार मंत्रालय, दिल्ली, 1999, पृ. 105-110
12. सूद, जे.पी., आधुनिक भारतीय सामाजिक तथा राजनीतिक विचार की मुख्य धाराएँ, पृ. 390-392
13. वही, पृ. 392
14. वर्मा, वी.पी. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, आगरा, 1998, पृ. 323
15. एफ. वेलेंटाइन शिरोल, पूर्वोवत, पृ. 90-97
16. नेहरू, जवाहर लाल, दि डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, पृ. 456
17. वही, पृ. 456
18. बोस, दि इंडियन स्ट्रगल, पृ. 412-414
19. विपिन चन्द्र, मृदुला मुखर्जी एवं आदित्य मुखर्जी, आजादी के बाद का भारत (1947-2000) हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2002, पृ. 113
20. उपर्युक्त
21. लूनिया, बी.एन., भारतीय संस्कृति का इतिहास, पृ. 13
22. ग्रोवर, बी.एल., अलका मेहता एवं यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास-एक नवीन मूल्यांकन (1707 ई. से वर्तमान समय तक) एस. चन्द एण्ड कंपनी, नई दिल्ली, पृ. 292
23. ईश्वरी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ मार्डन इंडिया, पृ. 315-320